

तदाश्चर्यं समालोक्य स राजा धनसेनवाक् । विद्युद्वेगा तथान्ये च संजाताः श्रावकोत्तमाः ॥४६॥
 अन्यैश्चापि महाभव्यैः स्वर्गमोक्षसुखप्रदः । गुरुणां विनयः कार्यो विशुद्धपरिणामतः ॥४७॥
 सर्वकार्यप्रसिद्धिं च या करोति क्षणाद्धतः । अस्तु सा सद्गुरोर्भक्तिः क्रियासन्दोहभूषणम् ॥४८॥
 वन्द्यते स गुरुनित्यं यः संसारमहार्णवम् । स्वयं तरति पूतात्मा भव्यानां तारणक्षमः ॥४९॥

यस्य श्रीजिनपादपद्मयुगले देवेन्द्रचन्द्रार्चिते
 शास्त्रे सद्विनयस्तथा मुनिजने जैने सदा तिष्ठति ।
 तस्य श्रीजयकीर्तिकान्तविलसद्बोधादयः सद्गुणाः
 प्रीत्यां पार्श्वनिवासिनोतिनितरां तिष्ठन्ति शर्मप्रदाः ॥५०॥

इति कथाकोशे विनयाख्यानं समाप्तम् ।

९०. अवग्रहाख्यानम्

पादपद्मद्वयं नत्वा जिनेन्द्रस्य शुभप्रदम् । उपधानकथा वक्ष्ये यतः सौख्यं भजाम्यहम् ॥१॥
 अहिच्छत्रपुरे राजा वसुपालो विचक्षणः । श्रीमज्जैनमते भक्तो वसुमत्याभिधा प्रिया ॥२॥

से लोगों ने श्रावक-व्रत स्वीकार किए। विनय का इस प्रकार फल देखकर अन्य भव्यजनों को भी उचित है कि वे गुरुओं का विनय, भक्ति निर्मल भावों से करें ॥४२-४७॥

जो गुरुभक्ति क्षण मात्र में कठिन से कठिन काम को पूरा कर देती है वही भक्ति मेरी सब क्रियाओं की भूषण बने। मैं उन गुरुओं को नमस्कार करता हूँ कि जो संसार-समुद्र से स्वयं तैरकर पार होते हैं और साथ ही और भव्यजनों को पार करते हैं ॥४८-४९॥

जिनके चरणों की पूजा देव, विद्याधर, चक्रवर्ती आदि बड़े-बड़े महापुरुष करते हैं उन जिन भगवान् का, उनके रचे पवित्र शास्त्रों का और उनके बताये मार्ग पर चलने वाले मुनिराजों का जो हृदय से विनय करते हैं, उनकी भक्ति करते हैं उनके पास कीर्ति, सुन्दरता, उदारता, सुख-सम्पत्ति और ज्ञान-आदि पवित्र गुण अत्यन्त पड़ोसी होकर रहते हैं अर्थात् विनय के फल से उन्हें सब गुण होते हैं ॥५०॥

९०. अवग्रह-नियम लेने वाले की कथा

पुण्य के कारण जिन भगवान् के चरणों को नमस्कार कर उपधान अवग्रह की अर्थात् वह काम जब तक न होगा तब तक मैं ऐसी प्रतिज्ञा करता हूँ, इस प्रकार का नियम कर जिसने फल प्राप्त किया, उसकी कथा लिखी जाती है, जो सुख को देने वाली है ॥१॥

अहिच्छत्रपुर के राजा वसुपाल बड़े बुद्धिमान् थे। जैनधर्म पर उनकी बड़ी श्रद्धा थी। उनकी रानी का नाम वसुमती था। वसुमती भी अपने स्वामी के अनुरूप बुद्धिमती और धर्म पर प्रेम करने वाली थी। वसुपाल ने एक बड़ा ही विशाल और सुन्दर 'सहस्रकूट' नाम का जिनमन्दिर बनवाया।

तेन श्रीवसुपालेन कारिते भुवनोत्तमे। लसत्सहस्रकूटे श्री-जिनेन्द्रभवने शुभे ॥३॥
 श्रीमत्पाश्र्वजिनेन्द्रस्य प्रतिमा पापनाशिनी। तत्रास्ते चैकदा तस्यां भूपतेर्वचनेन च ॥४॥
 दिने लेपं ददात्युच्चैर्लेपकाराः कलान्विताः। मांसादिसेविनस्ते तु ततो रात्रौ स लेपकः ॥५॥
 पतत्येव क्षितौ शीघ्रं कदर्थ्यन्ते च तेखिलाः। एवं च कतिचिद्द्वारैः खेदक्षुण्णे नृपादिके ॥६॥
 तदैकेन परिज्ञात्वा लेपकारेण धीमता। देवताधिष्ठितां दिव्यां जिनेन्द्रप्रतिमां हिताम् ॥७॥
 कार्यसिद्धिर्भवेद्यावत्तावत्कालं सुनिश्चितम्। अवग्रहं समादाय मांसादेर्मुनिपाश्वरतः ॥८॥
 तस्यां लेपः कृतस्तेन स लेपः संस्थितस्तदा। कार्यसिद्धिर्भवत्येवं प्राणिनां व्रतशालिनाम् ॥९॥
 तदासौ वसुपालेन भूभुजा परया मुदा। नानावस्त्रसुवर्णाद्यैः पूजितो लेपकारकः ॥१०॥
 तथा कार्यप्रसिद्ध्यर्थं भक्त्या ज्ञानादिकर्मणि। अवग्रहः प्रकर्त्तव्यो मुन्यादिबुधसत्तमैः ॥११॥
 जिनपतिकथितोसौ बोधसिन्धुः प्रयुक्त्या विशदतरमुनीन्द्रैः सेवितः शर्महेतुः।
 सुरनरखचरेन्द्रैः पूजितो भक्तिसांद्रैः स भवतु मम नित्यं केवलज्ञानकर्त्ता ॥१२॥

इति कथाकोशे अवग्रहाख्यानं समाप्तम्।

उसमें उन्होंने श्रीपाश्र्वनाथ भगवान् की प्रतिमा विराजमान की। राजा ने प्रतिमा पर लेप चढ़ाने को एक अच्छे होशियार लेपकार को बुलाया और प्रतिमा पर लेप चढ़ाने को उससे कहा। राजाज्ञा पाकर लेपकार ने प्रतिमा पर बहुत सुन्दरता से लेप चढ़ाया। पर रात होने पर वह लेप प्रतिमा पर से गिर पड़ा। दूसरे दिन फिर ऐसा ही किया गया। रात में वह लेप भी गिर पड़ा। गर्ज यह कि वह दिन में लेप लगाता और रात में वह लेप गिर पड़ता। इस तरह उसे कई दिन बीत गए। ऐसा क्यों होता है, इसका उसे कुछ भी कारण न जान पड़ा। उससे वह तथा राजा वगैरह बड़े दुःखी हुए। बात असल में यह थी कि वह लेपकार मांस खाने वाला था। इसलिए उसकी अपवित्रता से प्रतिमा पर लेप न ठहरता था। तब उस लेपकार को एक मुनि द्वारा ज्ञान हुआ कि प्रतिमा अतिशय वाली है, कोई शासनदेवी या देव उसकी रक्षा में सदा नियुक्त रहते हैं। इसलिए जब तक यह कार्य पूरा हो तब तक मुझे मांस के न खाने का व्रत लेना चाहिए। लेपकार ने वैसा ही किया, मुनिराज के पास उसने मांस न खाने का नियम ले लिया। इसके बाद जब उसने दूसरे दिन लेप किया तो अब की बार वह ठहर गया। सच है, व्रती पुरुषों के कार्य की सिद्धि होती ही है। तब राजा ने अच्छे-अच्छे वस्त्राभूषण देकर लेपकार का बड़ा आदर-सत्कार किया। जिस तरह इस लेपकार ने अपने कार्य की सिद्धि के लिए नियम किया उसी प्रकार और लोगों को तथा मुनियों को भी ज्ञान प्रचार, शासन-प्रभावना आदि कामों में अवग्रह या प्रतिज्ञा करना चाहिए ॥२-११॥

वह जिनेन्द्र भगवान् का उपदेश किया ज्ञानरूपी समुद्र मुझे भी केवलज्ञानी-सर्वज्ञ बनावें, जो अत्यन्त पवित्र साधुओं द्वारा आत्म-सुख की प्राप्ति के लिए सेवन किया जाता है और देव, विद्याधर, चक्रवर्ती आदि बड़े-बड़े महापुरुष जिसे भक्ति से पूजते हैं ॥१२॥

११. अभिमानस्याख्यानम्

विशुद्धकेवलज्ञानं नत्वा श्रीमज्जिनेश्वरम्। बहुमानकथां वच्मि सारशर्मप्रदायिनीं ॥१॥
 काशीदेशे सुविख्याते जातो वाराणसीपुरे। राजा वृषध्वजो धीमान्स्वप्रजाप्रतिपालकः ॥२॥
 वसुमत्यभिधा तस्य महादेवी बभूव च। रूपलावण्यसौभाग्यमण्डिता पूर्वपुण्यतः ॥३॥
 तथा गंगानदीतीरे पलासग्रामवासकः। नाम्नाशोकोभवद्धीमान्महागोकुलिकस्तदा ॥४॥
 ददात्यसौ नरेन्द्राय तस्मै संवत्सरं प्रति। सद्घृतैः पूर्णकुंभानां सहस्रं करमुत्तमम् ॥५॥
 तस्य भार्याभवन्नन्दा सती वन्ध्या स्वकर्मतः। साशोकाय सुधीर्भार्या रोचते नैव मानसे ॥६॥
 रूपशीलादियुक्तापि कामिनी पुत्रवर्जिता। पुंसश्चित्ते समायाति नैव वल्लीव निष्फला ॥७॥
 अशोकस्तु तदा सोपि सुधीर्गोकुलिको महान्। पुत्रार्थं कामिनीमन्यां सुनन्दां परिणीतवान् ॥८॥
 तयोश्च कलहे जाते स्त्रियोस्तेन च धीमता। अर्द्धमर्द्धं विधायोच्चैर्दत्तं सर्वं गृहादिकम् ॥९॥
 नन्दा नित्यं विशुद्ध्यादि-भाजनादिप्रयत्नकम्। दानमानादिसत्पूजां गोपालानां विधाय च ॥१०॥

११. अभिमान करने वाली की कथा

निर्मल केवलज्ञान धारी जिन भगवान् को नमस्कार का मान करने से बुरा फल प्राप्त करने वाले की कथा लिखी जाती है। इस कथा को सुनकर जो लोग मान के छोड़ने का यत्न करेंगे वे सुख लाभ करेंगे ॥१॥

बनारस के राजा वृषध्वज प्रजा का हित चाहने वाले और बड़े बुद्धिमान् थे। इनकी रानी का नाम वसुमती था। वसुमती बड़ी सुन्दर थी। राजा का उस पर अत्यन्त प्रेम था ॥२-३॥

गंगा के किनारे पर पलास नाम का एक गाँव बसा हुआ था। उसमें अशोक नाम का एक ग्वाला रहता था। वह ग्वाला राजा को गाँव के लगान में कोई एक हजार घी के भरे घड़े दिया करता था। उसकी स्त्री नन्दा पर इसका प्रेम न था। इसलिए कि वह बाँझ थी और यह सच है, सुन्दर या गुणवान् स्त्री भी बिना पुत्र के शोभा नहीं पाती है और न उस पर पति का पूरा प्रेम होता है। वह फल रहित लता की तरह निष्फल समझी जाती है। अपनी पहली स्त्री को निःसन्तान देखकर अशोक ग्वाले ने एक और ब्याह कर लिया। इस नई स्त्री का नाम सुनन्दा था। कुछ दिनों तक तो इन दोनों सौतों में लोक-लाज से पटती रही, पर जब बहुत ही लड़ाई-झगड़ा होने लगा तब अशोक ने इनसे तंग आकर अपनी जितनी धन-सम्पत्ति थी उसे दोनों के लिए आधी-आधी बाँट दिया। नन्दा को अलग घर में रहना पड़ा और सुनन्दा अशोक के पास ही रही। नन्दा में एक बात बड़ी अच्छी थी वह एक तो समझदार थी। दूसरे वह अपने दूध दुहने के लिए बरतन वगैरह को बड़ा साफ रखती। उसे सफाई बड़ी पसन्द थी। इसके सिवा वह अपने नौकर ग्वाले पर बड़ा प्रेम करती। उन्हें अपना नौकर न समझ अपने कुटुम्ब की तरह मानती। वह उनका बड़ा आदर-सत्कार करती। उन्हें हर एक त्यौहारों के मौकों पर दान-मानादि से बड़ा